PGS NATIONAL COLLEGE OF LAW, MATHURA

UNIT-1 **PAPER NAME – BANKRUPTCY LAW**

Q1. दिवाला विधि से आप क्या समझते है ? दिवाला विधि की नीतियों , उददेश्यो एवं प्रभावों पर विस्तार पूर्वक वर्णन कीजिये।

उत्तर- (सन् 1828 में सर्वप्रथम भारत में बम्बई, कलकत्ता और मद्रास नामक प्रेसीडेन्सी नगरों में दिवाला न्यायालयों की स्थापना हुई जिन्हें "दिवालिया ऋणगृहीताओं के अनुतोष के लिये न्यायालय " (Courts for Relief of Insolvent Debtors) कहा जाता था। यदि कोई व्यक्ति ऐसे न्यायालय के आदेश से क्षुब्ध होता था तो वह सुप्रीम कोर्ट में अपील कर सकता था। सन् 1828 का यह अधिनियम पूरी तरह अँग्रेजी कानून पर आधारित था । यह समय समय पर परिवर्तित तथा संशोधित होने पर भी सन् 1848 तक लागू रहा। सन् 1848 में फिर सभी पूर्ववर्ती अधिनियमों को निरसित कर दिया गया तथा एक अधिनियम जिसे भारतीय दिवाला अधिनियम (Indian Insolvency Act) कहा गया, पारित किया गया। इस अधिनियम मामलों में व्यापारी एवं गैर-व्यापारी वर्ग के मध्य अन्तर को बनाये रखा।

1861 में एक अन्य अधिनियम पारित हुआ जिसके परिणामस्वरूप भारत में उच्च न्यायालयों की स्थापना की गई। दिवाला न्यायालय (Insolvency Court) पहले की तरह ही कार्य करते रहे • किन्तु 1861 के अधिनियम द्वारा यह व्यवस्था की गई कि उच्च न्यायालय का जज ऐसे न्यायालय का सभापति हुआ करेगा। सन् 1848 की दिवाला विधि बहुत पुरानी हो चुकी थी, उधर इंग्लैण्ड में शोधन अक्षमता (Bankruptcy) सम्बन्धी कानून में महान परिवर्तन हो चुके थे। अत: समय के परिवर्तन के साथ सन् 1909 में "प्रेसीडेन्सी टाउन्स इन्सॉल्वेन्सी एक्ट" पारित हुआ जो भारतीय विधायिका की देन था तथा इसके द्वारा 1848 का अधिनियम निरसित कर दिया गया। सन् 1848 के अधिनियम की कमियाँ ही इस अधिनियम के जन्म का कारण बनीं। ये कमियाँ निम्न लिखित थीं—

(1)यह अधिनियम ऋणदाताओं के लाभ के लिये न होकर ऋणी के लाभ के लिये अधिक था।
(2) शासकीय समनुदेशिती (Official Assignee) की शक्तियाँ बहुत कम तथा सीमित थी वह केवल आस्तियों को एकत्रित कर सकता था और उसे किसी कार्यवाही में हस्तक्षेप करने की शक्ति नहीं थीं।
(3) ऋणी के प्रार्थना पत्र पर उसके दुराचरण को सिद्ध करने का भार ऋणदाताओं पर था।
(4) दिवालिये की सम्पत्ति की खोज के विषय में उपबन्ध अपर्याप्त थे।
(5) शासकीय समनुदेशिती में ऋणी की सम्पत्ति निहित होने का अर्थ अचल विधिक हस्तांतरण होता था चाहे सम्पत्ति भारत में हो या इससे बाहर।
(6) यह अधिनियम ब्रिटिश संसद की देन था।
जहाँ तक अन्य प्रान्तों का प्रश्न था उनके लिये पहली बार 1877 में दिवाला विधि को लाग करने का प्रयत्न किया गया एवं करीब 15 नियमों का सम्पादन किया गया जो 1877 के व्यवहा प्रक्रिया संहिता के अध्याय 20 के अधीन लिखे गये जिसके अनुसार जिला न्यायालयों को यह शक्ति दी गई कि शोधन अक्षमता की याचिकाओं को सुने तथा उन्मोचन के आदेश दे। सन् 1907 में पहला प्रान्तीय दिवाला अधिनियम पास हुआ जिसमें लगभग 56 धारायें थीं।

PGS NATIONAL COLLGE OF LAW

यह अधिनियम प्रान्तीय दिवाला अधिनियम 1920 द्वारा निरसित कर दिया गया। यही 1920 का अधिनियम वर्तमान प्रान्तीय दिवाला अधिनियम है।)

दिवाला विधि का उद्देश्य (Main objects of Insolvency Law) – दिवाला विधि के उद्देश्य के सम्बन्ध में एक बार अमेरिका के उच्चतम न्यायालय ने कहा था कि इसका मुख्य उद्देश्य दमनात्मक ऋण से ईमानदार ऋणी को मुक्ति दिलाना एवं व्यापारिक विपत्तियों के द्वारा उत्पन्न उत्तरदायित्व तथा आभारों से मुक्त नये रूप से जीवन शुरू करने के लिए आज्ञा प्रदान करना है। दिवाला विधि का उद्देश्य न केवल वैयक्तिक हित ही है वरन् सार्वजनिक भी है क्योंकि यह ईमानदार परन्तु अभांगे ऋणी को, जो ऋणदाताओं में विभाजन हेतु अपनी सम्पूर्ण सम्पत्ति को, जो उसके पास दिवालिया होने के समय थी, समर्पित कर देता है, जीवन में एक नया अवसर एवं क्षेत्र प्रदान है जो पूर्व ऋणों की छाया से बहुत दूर होता है।

हैनली के अनुसार, दो बड़े ध्येयों को मिलाना तथा नियमित करना ही प्रत्येक दिवाला विधि का मुख्य उद्देश्य होना चाहिये

(1) ऋणी की सम्पत्ति का अतिशीघ्र समान रूप से तथा मितव्ययितापूर्वक वितरण; एवं

(2) जब ऋणी ने अपनी सम्पूर्ण सम्पत्ति समर्पित कर दी है तो ऋणदाताओं की माँग से उसके शरीर की मुक्ति ।

ब्लैकस्टोन के अनुसार, दिवाला कानून वे कानून हैं जो वाणिज्य या व्यापार के प्रलाभ के लिए प्रकल्पित किए गये हैं तथा जो मानवता एवं न्याय के सिद्धान्तों पर आधारित हैं तथा इस उद्देश्य के लिए वे न केवल ऋणदाताओं को बल्कि स्वयं दिवालिया ऋणी को भी कुछ विशेषाधिकार प्रदान करते हैं।

रिंगवुड के अनुसार, दिवाला विधि के दो मुख्य उद्देश्य हैं, एक तो ऋणी को सम्पत्ति को • ऋणदाताओं के मध्य अत्यन्त शीघ्र एवं किफायती रीति से वितरित करना एवं दूसरा ऋणी को जीवन की नई शुरूआत देना, अपने ऋणदाताओं की माँगों से एकदम स्वतन्त्र जबकि वह कतिपय गम्भीर अपराधों को कारित करने का दोषी न हो।

ब्लैकस्टोन के अनुसार, ऋणी को प्राप्त विशेषाधिकारों में संरक्षण आदेश, समझौता-संयोजना एवं पूर्ण उन्मोचन आदि को सम्मिलित किया जा सकता है तथा ऋणदाताओं के विशेषाधिकारों में पूर्व प्रभाव, प्रतिष्ठित स्वामित्व एवं कपटपूर्ण अन्तरणों से बचाव आदि को सम्मिलित किया जा सकता है।

दिवाला विधि के उद्देश्य के सम्बन्ध में अर्जुनदास वासदेव बनाम नरायन, A.I.R. 1956 मद्रास 157 के वाद में मद्रास उच्च न्यायालय का मत था कि प्रान्तीय दिवाला अधिनियम द्वारा प्रदत्त लाभ परिश्रमी ऋणदाताओं को दिखाई जाने वाली वरीयता की अपेक्षा कहीं अधिक है। दिवाला विधि का दोहरा उद्देश्य है

(i) यह ऋणी को उन ऋणदाताओं के चंगुल से, जिनके कर्जों का भुगतान करने में ऋणी असफल रहा है, मुक्ति दिलाता है।

(ii) ऋणी एवं ऋणदाता के मध्य कपट पर आधारित किसी संव्यवहार को निरुत्साहित करके साम्यपूर्ण ढंग से ऋणी की सम्पूर्ण सम्पत्ति को ऋणदाताओं में वितरण की व्यवस्था करता है।

PGS NATIONAL COLLEGE OF LAW

PGS NATIONAL COLLEGE OF LAW, MATHURA

UNIT-1 **PAPER NAME – BANKRUPTCY LAW**

Q2. दिवालिया नोटिस क्या है ? इससे सम्बंधित विधिक उपबन्ध बताइये। क्या कोई मृतक या भागीदार दिवालिया न्याय निर्णीत हो सकता है ?

उत्तर-दिवाला याचिका का प्रस्तुतीकरण (Presentation of insolvency petition) — प्रान्तीय दिवाला अधिनियम की धारा 7 के अनुसार, यदि ऋणी धारा 6 के अधीन कोई दिवाला कार्य करता है तो दिवाला याचिका प्रस्तुत कर सकता है। धारा 7 यह उपबन्धित करती है कि अधिनियम में उल्लिखित शर्तों के अधीन यदि ऋणी दिवाला का कार्य करता है तो दिवाला याचिका या तो ऋणदाता या ऋणी द्वारा प्रस्तुत की जा सकती है तथा न्यायालय ऐसी याचिका पर उसको दिवालिया न्यायनिर्णीत करते हुए आदेश (एतस्मिन् पश्चात् न्यायनिर्णय का जायेगा) कर सकता है।

ऋणदाता द्वारा दिवाला याचिका प्रस्तुत करने की शर्तें (Conditions on which a creditor may petition)- प्रान्तीय दिवाला अधिनियम की धारा 9 उन परिस्थितियों का वर्णन करती है जिनमें कि एक ऋणदाता दिवाला याचिका प्रस्तुत कर सकता है। धारा 9 यह उपबन्धित करती है कि ऋणदाता ऋणी के विरुद्ध दिवाला याचिका प्रस्तुत करने के लिये अधिकृत न होगा जब तक कि

(क) ऋणी द्वारा ऋणदाता के देय ऋण या यदि दो या अधिक ऋणदाता याचिका में सम्मिलित होते हैं तो ऐसे ऋणदाताओं को देय ऋण की समस्त धनराशि 500 रुपये नहीं है, और

(ख) ऋण या तो तुरन्त या भविष्य में किसी भी निश्चित समय पर देय परिसमापित धनराशि नहीं है; और

(ग) दिवाला का कार्य, जिस पर याचिका आधारित है, याचिका के प्रस्तुत करने से पूर्व तीन माह के भीतर नहीं हुआ है।

जहाँ कि तीन माह की उक्त अवधि किसी ऐसे दिन पर समाप्त होती है जिस दिन न्यायालय बन्द रहता है वहाँ दिवाला याचिका उस दिन प्रस्तुत की जा सकेगी जिस दिन कि न्यायालय पुनः खुले।

यदि याचिकाकर्ता ऋणदाता सुरक्षित ऋणदाता है तो वह अपनी याचिका में या तो यह कथन करेगा कि वह अपनी प्रतिभूति को त्यागने के लिए इच्छुक है या प्रतिभूति के मूल्य का अनुमान देगा। पश्चात् कथित मामले में इस प्रकार अनुमानित मूल्य घटाने के पश्चात् उसकी देय ऋण की शेष धनराशि की सीमा तक उसे उसी रूप में जैसे कि वह असुरक्षित ऋणदाता होता, याचिकाकर्ता ऋणदाता के रूप में स्वीकार किया जा सकता है।

ऋणी द्वारा याचिका प्रस्तुत करने की शर्तें (Conditions on which debtor may peti tion)- प्रान्तीय दिवाला अधिनियम की धारा 10 उन परिस्थितियों का वर्णन करती है जिनमें एक ऋणी दिवाला याचिका प्रस्तुत कर सकता है। धारा 10 यह उपबन्धित करती है कि—

PGS NATIONAL COLLEGE OF LAW

(1) ऋणी दिवाला याचिका को प्रस्तुत करने के लिए अधिकृत नहीं होगा जब तक अपने ऋण को चुकाने में असमर्थ नहीं है; तथा

(क) उसके ऋणों की धनराशि 500 रुपये नहीं है; या

(ख) वह रुपये के भुगतान के लिये किसी न्यायालय की डिक्री के निष्पादन में गिरफ्तारी या कारावास के अधीन नहीं है; या

(ग) ऐसी किसी डिक्री के निष्पादन में कुर्की का आदेश दिया गया हो और उसकी सम्पत्ति के विरुद्ध चालू हो।

(2) कोई ऋणी जिसके सम्बन्ध में प्रेसीडेन्सी नगर दिवाला अधिनियम 1909 या इस अधिनियम के अन्तर्गत किया गया न्यायनिर्णयन का आदेश उसकी उन्मुक्ति के लिये प्रार्थना करने या प्रार्थना-पत्र को अभियोजित करने के लिए उसकी असफलता कारण रद्द किया जा चुका है, न्यायालय की अनुमति के बिना, जिसके द्वारे न्यायनिर्णयन आदेश रद्द किया गया था, दिवाला याचिका प्रस्तुत करने को अधिकृत न होगा। ऐसा न्यायालय अनुमति प्रदान नहीं करेगा जब तक कि वह सन्तुष्ट नहीं हो जात है कि या तो----

(i) ऋणी अपना प्रार्थना पत्र प्रस्तुत करने या अभियोजित करने से, जैसा भी मामल हो, किसी युक्तियुक्त कारण द्वारा रोका गया था; या

(ii) कि उस याचिका में, जिस पर न्यायनिर्णयन का आदेश किया गया था, निहित उ तथ्यों से मूलतः भिन्न तथ्यों पर याचिका आधारित है।

धारा 10 की उपधारा (1) के अधीन सामान्य शर्त यह है कि ऋणगृहीता अपने ऋणों को अद करने में असमर्थ हो और तीनों वैकल्पिक शर्तों में से किसी एक का विद्यमान होना आवश्यक है अपने ऋण को अदा करने की इच्छा न होना उसका भुगतान करने में असमर्थता के तुल्य नहीं होता। यह सिद्ध करने का भार कि ऋणगृहीता अपने ऋणों को अदा करने में असमर्थ है स्वयं ऋणगृहीता पर होता है।

धारा 10 की उपधारा (2) उन मामलों में लागू होती है जहाँ कि ऋणगृहीता अपना प्रार्थना पत्र पहले ही दे चुका हो किन्तु उस पर दिया गया न्यायनिर्णयन का आदेश इस आधार पर प्रतिसँहृत कर दिया गया हो कि उसने उन्मोचन के लिए प्रार्थना पत्र नहीं दिया था या जहाँ कि ऐसा प्रार्थना-पत्र दिया गया हो वहाँ उसने उसकी पैरवी न को हो।)

वे व्यक्ति जो दिवालिया निर्णीत नहीं किये जा सकते हैं (Persons who may not e adjudged insolvent)- प्रान्तीय दिवाला अधिनियम की धारा 7 उपबन्धित करती है कि यदि कोई ऋणगृहीता दिवाला कार्य करता है तो उसकी शोधन अक्षमता के लिए एक आवेदन पत्र या तो किसी ऋणदाता द्वारा या ऋणगृहीता द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता है और न्यायालय ऐसे आवेदन पर, उसे दिवालिया निर्णीत करने का आदेश दे सकेगी। निम्नलिखित व्यक्तियों को दिवालिया, निर्णीत नहीं किया जा सकता-

PGS NATIONAL COLLEGE OF LAW

PGS NATIONAL COLLEGE OF LAW, MATHURA

UNIT-1 **PAPER NAME – BANKRUPTCY LAW**

(1) अवयस्क (Minor) – अवयस्क वैधानिक कार्य करने में सक्षम नहीं होते और न संविदा में ही प्रवेश कर सकते हैं। अवयस्कों की इस स्थिति के कारण उन्हें उनके कार्य के लिए उत्तरदायी नहीं बनाया जा सकता। अवयस्क द्वारा की गई संविदा शून्य होती है। अतः किसी भ दशा में एक अवयस्क को चाहे उसके अपने आवेदन पत्र पर या किसी ऋणदाता के आवेदन-पत्र दिवालिया निर्णीत नहीं किया जा सकता, चाहे वह ऋण उसके द्वारा चलाये जाने वाले व्यापार अनुक्रम में ही लिया गया हो।

जहाँ किसी फर्म में अवयस्क एवं वयस्क दोनों साझीदार होते हैं तब केवल वयस्क साझीदारा को दिवालिया निर्णीत किया जा सकता है, किन्तु अवयस्क साझेदारों को नहीं। यदि इस प्रकार न मामले में स्वयं फर्म के ही विरुद्ध न्यायनिर्णयन के आदेश की वांछा की जाती है तो यह अवयस्क साझीदारों के सिवाय शेष फर्म के विरुद्ध दिया जायेगा। यदि किसी अवयस्क खिलाफ दिवालिया होने का न्यायनिर्णयन कर भी दिया गया हो तो उसे निरस्त कर दिया जायेगा।

(2)पागल (Lunatic)- पागलों के विरुद्ध कोई कार्यवाही करने का औचित्य नहीं होता क्योंकि उसकी मनःस्थिति ठीक नहीं होती। भारतवर्ष में उन्हें दिवालिया घोषित किये जाने वाली बात की पुष्टि नहीं होती। पागलों की कोई इच्छा नहीं होती, उनका कोई उद्देश्य नहीं होता, इनमें समझने-बुझने की शक्ति नहीं होती, इसलिए इन्हें दिवालिया घोषित करने का कोई औचित्य नहीं होता।

(3) निगमित कम्पनियाँ (Corporated Companies)– निगमित कम्पनियों के विरुद्ध दिवालियापन की याचिका प्रस्तुत नहीं की जा सकती। यदि कोई कम्पनी दिवालियापन की स्थिति भी गई है तो उक्त प्रकार की कार्यवाही करना विधिसम्मत नहीं माना जाता। उसके लिए उपयुक्त तरीका यही है कि उसके समापन की कार्यवाही की जाय। इसके सम्बन्ध में प्रान्तीय दिवाला अधिनियम की धारा 8 में उपबन्ध किया गया है। धारा 8 यह उपबन्धित करती है कि किसी निगम के विरुद्ध या तत्समय प्रवत्त किसी संविधि के अधीन पंजीकृत किसी संस्था या कम्पनी के विरुद्ध कोई दिवाला याचिका प्रस्तुत नहीं की जायेगी।

(4) विदेशी (Foreigner) – किसी भी विदेशी को भारतीय न्यायालय द्वारा दिवालिया घोषित नहीं किया जा सकता जब तक कि शोधन अक्षमता का कार्य उसने अपने निवास काल में भारत में न किया हो। याचिका प्रस्तुत करने के समय विदेशी का भारत में निवास आवश्यक नहीं होता क्योंकि न्यायालय को विदेशी के दिवाला कार्य का समय दृष्टिगत रखना है न कि याचिका प्रस्तुत करने का समय किसी विदेशी के मामले में भारत के किसी न्यायालय द्वारा किसी ऐसे दिवाला कार्य के लिए जो उसके अभिकर्ता द्वारा किया गया हो, उस विदेशी के विरुद्ध न्याय निर्णयन का आदेश नहीं दिया जा सकता जब तक कि वह कार्य उसके द्वारा प्राधिकृत न किया गया हो या जब तक कि अभिकर्ता की स्थिति ऐसी न रही हो कि उसका प्रधान उसके कार्यों पर ही सफल या विफल हो सके।

वे व्यक्ति जो दिवालिया निर्णीत किये जा सकते हैं (Persons who may be adjudged निम्नलिखित व्यक्ति दिवालिया घोषित किये जा सकते हैं insolvent)–

PGS NATIONAL COLLEGE OF LAW

(1) विवाहित स्त्रियाँ (Married women)– भारत में वह विवाहित स्त्री जिसके पास पृथक् सम्पत्ति हो, अपने द्वारा संविदाबद्ध किये गये ऋण के सम्बन्ध में दिवालिया निर्णीत की जा सकती हैं, चाहे वह हिन्दू हो या मुसलमान हो ।

(2) संयुक्त ऋणी (Joint debtor)– कोई ऋणदाता दो या दो से अधिक संयुक्त ऋण गृहीताओं के विरुद्ध एक ही आवेदन-पत्र प्रस्तुत कर सकता है बशर्ते कि उनमें से प्रत्येक ने कोई कोई दिवाला कार्य किया हो। यदि एक ऋणदाता तीन व्यक्तियों के विरुद्ध संयुक्त रूप से एक डिक्री प्राप्त करता है और उनकी संयुक्त सम्पत्ति 21 दिन तक कुर्की के अधीन रह जाती है तो वह ऋणदाता उन सभी के विरुद्ध एक ही दिवाला याचिका प्रस्तुत कर सकता है। किन्तु यदि सम्पत्ति उनमें से केवल दो व्यक्तियों की है, तो तीसरे को दिवालिया निर्णीत नहीं किया जा सकता है।

(3) फर्म के साझेदार (Partners in a firm)– कोई ऋणदाता फर्म के सदस्य के विरुद्ध अन्य को सम्मिलित किये बिना ही एक पृथक् आवेदन पत्र प्रस्तुत कर सकता है। ऋणदाता दो या अधिक व्यक्तियों के विरुद्ध संयुक्त आवेदन पत्र दे सकता है। दो या अधिक भागीदारों के विरुद्ध दिये गये संयुक्त आवेदन पत्र को मान्य बनाने के लिए यह दिखलाना जरूरी है कि उनमें से कोई न कोई दिवाला कार्य किया गया था।

(4) संयुक्त हिन्दू परिवार (Joint Hindu family)- संयुक्त हिन्दू परिवार के सदस्य किसी ऋणदाता द्वारा दिये गये आवेदन पत्र पर दिवालिया निर्णीत किये जा सकते हैं बशर्ते कि वे सब वैयक्तिक रूप से एक संयुक्त ऋण के लिए दायित्वाधीन हों और उन्होंने दिवाला का कार्य संयुक्त रूप से किया हो। संयुक्त हिन्दू परिवार का व्यापार परिवार के प्रबन्धक द्वारा चलाया जाता है और ऋण उसके द्वारा व्यापार के अनुक्रम में लिये जाते हैं तो अन्य सदस्य उन ऋणों के लिये वैयत्तिक रूप से दायित्वाधीन नहीं होते और उन ऋणों के सम्बन्ध में उन्हें दिवालिया निर्णीत नहीं किया जा सकता जब तक कि व्यापार में सक्रिय भाग लेकर या अन्यथा किसी प्रकार से अपने आपको वैयक्तिक रूप से दायित्वाधीन न बना लें।

Q3. सोधाशमता में उठे प्रश्नो के निपटारे के सम्बन्ध में न्यायालय की शक्तियों की विवेचना कीजिए।

उत्तर- दिवाला न्यायालयों का क्षेत्राधिकार (Jurisdiction of Insolvency Courts) – दिवाला वादों के परीक्षण के क्षेत्राधिकार के सम्बन्ध में प्रान्तीय दिवाला अधिनियम की धारा 3 में उपबन्ध किए गये हैं, जो निम्नलिखित हैं

(1) जिला न्यायालयों को दिवाला वादों के परीक्षण करने की शक्ति होती है।

(2) राज्य सरकार ऐसे अन्य न्यायालयों पर जो जिला न्यायालय के अधीनस्थ हों, दिवाला क्षेत्राधिकार आरोपित कर सकती हैं।

PGS NATIONAL COLLEGE OF LAW

(3) अधीनस्थ न्यायालयों, जब उनमें अधिनियम के अधीन क्षेत्राधिकार निहित कर दिया जाता है, अपनी स्थानीय सीमाओं के अन्दर जिला न्यायालय के साथ-साथ समान क्षेत्राधिकार का प्रयोग करती हैं।

(4) दिवाला क्षेत्राधिकार आरोपित करने के प्रयोजनार्थ लघुवाद न्यायालय (Small Causes Court) को जिला न्यायालय के अधीनस्थ माना जायेगा ।

दिवाला न्यायालय, जो प्रान्तीय दिवाला अधिनियम की धारा 3 के परन्तुक के अधीन गठित की जाती है, यद्यपि अन्यथा सब प्रकार से जिला न्यायालय के अधीनस्थ रहती है परन्तु जिला न्यायालय के साथ समवर्ती क्षेत्राधिकार का प्रयोग करती हैं।

दिवाला न्यायालयों की विशिष्ट शक्तियाँ (Special powers of Insolvency Courts)— दिवाला न्यायालयों की विशिष्ट शक्तियों के सम्बन्ध में प्रान्तीय दिवाला अधिनियम की धारा 4 में उपबन्धित किया गया है। धारा 4 के अनुसार, दिवाला न्यायालयों की निम्नलिखित शक्तियाँ होती हैं

(i) दिवाला न्यायालय ऐसे सभी प्रश्नों को विनिश्चित कर सकती है जो ऋणगृहीता और उसकी सम्पदा के तथा ऋणदाताओं या उनके द्वारा दावा करने वालों के मध्य उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार के प्रश्न हक के, प्राथमिकता के या किसी अन्य प्रकार के हो सकते हैं और इनमें विधि का या तथ्य का प्रश्न अन्तर्ग्रस्त हो सकता है।

इस प्रकार किसी भी शोधन अक्षमता की याचिका की सुनवाई करते समय यदि विवाद से सम्बन्धित कोई भी प्रश्न उत्पन्न हो जाय तो दिवाला न्यायालय उसका उसी सन्दर्भ में निपटारा कर सकता है। इस प्रकार का निपटारा करते समय न्यायालय को यह देखना पड़ता है कि विषय आवश्यक है अथवा नहीं। उक्त प्रकार के विषय का निवारण दिवाला न्यायालय तभी करते हैं, जब उन्हें यह प्रतीत हो कि विषय विवाद के निपटारे हेतु आवश्यक है ।

(ii) दिवाला न्यायालय इस प्रकार के सभी प्रश्नों पर विचार कर सकती है, चाहे वे कार्यवाही से उत्पन्न हुए हों, या जहाँ वे इस प्रकार उत्पन्न नहीं होते, न्यायालय उन पर विचार करना और उन्हें विनिश्चित करना निम्नलिखित बातों के लिए समायोजित एवं आवश्यक समझती है(अ) पूर्ण न्याय के लिए, (ब) सम्पत्ति के पूर्ण वितरण के लिए।

(iii) दिवाला न्यायालय, जहाँ उपरोक्त प्रश्नों को विनिश्चित करना आवश्यक नहीं समझती है, ऋणगृहीता के विक्रय योग्य हित को यदि वह यह विश्वास करती है कि ऋणगृहीता के पास ऐसा हित है, उस मामले में आगे बिना कोई जाँच किए हुए, बेच सकती है। ऐसे मामले में न्यायालय मात्र अपने विश्वास पर कार्य कर सकते हैं।

(iv) उपरोक्त किसी भी मामले में दिवाला न्यायालय द्वारा दिया गया निर्णय, अधिनियम के उपबन्धों के अधीन रहते हुए, केवल पक्षकारों के मध्य बन्धनकारी तथा अन्तिम होता है।

निम्नलिखित प्रश्न धारा 4 के अन्तर्गत आते हैं एवं दिवाला न्यायालय द्वारा विनिश्चत किये जा सकते हैं

PGS NATIONAL COLLEGE OF LAW

PGS NATIONAL COLLEGE OF LAW, MATHURA

UNIT-1 **PAPER NAME – BANKRUPTCY LAW**

(i) क्या देनदार की सम्पत्ति कुर्क की जा सकती है एवं बेची जा सकती है ?

(ii) क्या देनदार के पास बन्धकी के अधिकार हैं?

(iii) किसी केपटपूर्ण हस्तान्तरण के अधीन हस्तान्तरितियों द्वारा वसूल किए गये धन की वापसी ।

(iv) क्या कोई हस्तान्तरण मान्य है या काल्पनिक ?

(v) क्या कोई ऋणदाता सुरक्षित ऋणदाता है ?

(vi) हिन्दू पिता के दिवालिया होने की दशा में पुत्रों का यह अभिकथन कि दिवालिया होने से पूर्व ही बँटवारा हो चुका था।

(vii) मृतक पूर्वज तथा दिवालिये की सम्पत्ति को ऋणदाताओं के मध्य वितरण करने के लिये प्राथमिकता का प्रश्न

दिवाला न्यायालयों की सामान्य शक्तियाँ (General powers of Insolvency Courts) – दिवाला न्यायालयों की सामान्य शक्तियों के सम्बन्ध में प्रान्तीय दिवाला अधिनियम की धारा 5 के अन्तर्गत निम्नलिखित प्रावधान किये गये हैं—

(1) इस अधिनियम के उपबन्धों के अधीनस्थ रहते हुए, न्यायालय, इस अधिनियम के अधीन की गई कार्यवाहियों के सम्बन्ध में वही शक्ति रखेगी और उसी प्रक्रिया का अनुसरण करेगी जिसका कि वह मूल व्यवहार क्षेत्राधिकार के प्रयोग में करती है ।

(2) उपरोक्त के अधीनस्थ रहते हुए, उच्च न्यायालयों और जिला न्यायालयों को, अपने अधीनस्थ न्यायालयों में इस अधिनियम के अधीन चलाई गई कार्यवाहियों के सम्बन्ध में वही शक्ति होंगी और वे उसी प्रक्रिया का अनुसरण करेंगी जो वे दीवानी वादों के सम्बन्ध में क्रमश: रखते हैं तथा अनुसरण करते हैं ।

धारा 5 का प्रभाव यह है कि व्यवहार प्रक्रिया संहिता को शोधन अक्षमता की कार्यवाहियों में - दिवाला न्यायालयों पर लागू कर दिया गया है। वह प्रक्रिया जिसमें साधारणवाद और अपीलें. विनियमित होती हैं, मूल तथा अपीलीय शोधन अक्षमता की कार्यवाहियों को भी विनियमित करेंगी। तथापि यह बातें दिवाला अधिनियम में किए गये विशिष्ट उपबन्धों के अधीनस्थ रहेंगी।

PGS NATIONAL COLLEGE OF LAW